ISSN: 2395-7852

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management

Volume 10, Issue 4, July 2023

INTERNATIONAL STANDARD SERIAL NUMBER INDIA

Impact Factor: 6.551

+91 9940572462 +91 9940572462 ijarasem@gmail.com www.ijarasem.com

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

श्रीमद्भागवत महापुराण में निहित सांगीतिक तत्वों की विवेचना

[1]Bhageerath Joshi, [2]Vijayendra Gautam

[1]Research Scholar, Department of Music, Government PG College, Bundi,

Rajasthan, India

[2]Supervisor, Department of Music, Government PG College, Bundi, Rajasthan, India

सार

भागवत पुराण हिन्दुओं के अट्ठारह पुराणों में से एक है। इसे श्रीमद्भागवतम् या केवल भागवतम् भी कहते हैं। इसका मुख्य वर्ण्य विषय भक्ति योग है, जिसमें कृष्ण को सभी देवों का देव या स्वयं भगवान के रूप में चित्रित किया गया है। इसके अतिरिक्त इस पुराण में रस भाव की भक्ति का निरुपण भी किया गया है। परंपरागत तौर पर इस पुराण के रचयिता वेद व्यास को माना जाता है।

श्रीमद्भागवत भारतीय वाङ्मय का मुकुटमणि है। भगवान शुकदेव द्वारा महाराज परीक्षित को सुनाया गया भक्तिमार्ग तो मानो सोपान ही है। इसके प्रत्येक श्लोक में श्रीकृष्ण-प्रेम की सुगन्धि है। इसमें साधन-ज्ञान, सिद्धज्ञान, साधन-भक्ति, सिद्धा-भक्ति, मर्यादा-मार्ग, अनुग्रह-मार्ग, द्वैत, अद्वैत समन्वय के साथ प्रेरणादायी विविध उपाख्यानों का अद्‌भुत संग्रह है।[1]

परिचय

अष्टादश पुराणों में भागवत नितान्त महत्वपूर्ण तथा प्रख्यात पुराण है। पुराणों की गणना में भागवत अष्टम पुराण के रूप में परिगृहीत किया जाता है (भागवत 12.7.23)। भागवत पुराण में महर्षि सूत जी उनके समक्ष प्रस्तुत साधुओं को एक कथा सुनाते हैं। साधु लोग उनसे विष्णु के विभिन्न अवतारों के बारे में प्रश्न पूछते हैं। सूत जी कहते हैं कि यह कथा उन्होने एक दूसरे ऋषि शुकदेव से सुनी थी। इसमें कुल बारह स्कन्ध हैं। प्रथम स्कन्ध में सभी अवतारों का सारांश रूप में वर्णन किया गया है।[1,2,3]

आजकल 'भागवत' आख्या धारण करनेवाले दो पुराण उपलब्ध होते हैं :

- (क) देवीभागवत तथा
- (ख) श्रीमद्भागवत

अत: इन दोनों में पुराण कोटि में किसकी गणना अपेक्षित है ? इस प्रश्न का समाधान आवश्यक है।

विविध प्रकार से समीक्षा करने पर अन्ततः यही प्रतीत होता है कि श्रीमद्भागवत को ही पुराण मानना चाहिए तथा देवीभागवत को उपपुराण की कोटि में रखना उचित है। श्रीमद्भागवत देवीभागवत के स्वरूपनिर्देश के विषय में मौन है। परंतु देवीभागवत 'भागवत' की गणना उपपुराणों के अंतर्गत करता है (1.3.16) तथा अपने आपको पुराणों के अंतर्गत। देवीभागपंचम स्कंध में वर्णित भुवनकोश श्रीमद्भागवत के पंचम स्कंध में

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

प्रस्तुत इस विषय का अक्षरश: अनुकरण करता है। श्रीभागवत में भारतवर्ष की महिमा के प्रतिपादक आठों श्लोक (5.9.21-28) देवी भागवत में अक्षरश: उसी क्रम में उद्धृत हैं (8.11.22-29)। दोनों के वर्णनों में अंतर इतना ही है कि श्रीमद्भागवत जहाँ वैज्ञानिक विषय के विवरण के निमित्त गद्य का नैसर्गिक माध्यम पकड़ता है, वहाँ विशिष्टता के प्रदर्शनार्थ देवीभागवत पद्य के कृत्रिम माध्यम का प्रयोग करता है।

श्रीमद्भागवत भक्तिरस तथा अध्यात्मज्ञान का समन्वय उपस्थित करता है। भागवत निगमकल्पतरु का स्वयंफल माना जाता है जिसे नैष्ठिक ब्रह्मचारी तथा ब्रह्मज्ञानी महर्षि शुक ने अपनी मधुर वाणी से संयुक्त कर अमृतमय बना डाला है। स्वयं भागवत में कहा गया है-

> सर्ववेदान्तसारं हि श्रीभागवतमिष्यते।
> तद्रसामृततृप्तस्य नान्यत्र स्याद्रतिः क्वचित् ॥
> श्रीमद्भाग्वतम् सर्व वेदान्त का सार है। उस रसामृत के पान से जो तृप्त हो गया है, उसे किसी अन्य जगह पर कोई रति नहीं हो सकती। (अर्थात उसे किसी अन्य वस्तु में आनन्द नहीं आ सकता।
>
> बोलो
> [2]

भागवत की टीकाएँ

'विद्यावतां भागवते परीक्षा' : भागवत विद्वत्ता की कसौटी है और इसी कारण टीकासंपत्ति की दृष्टि से भी यह अतुलनीय है। विभिन्न वैष्णव संप्रदाय के विद्वानों ने अपने विशिष्ट मत की उपपत्ति तथा परिपुष्टि के निमित्त भागवत के ऊपर स्वसिद्धांतानुयायी व्याख्याओं का प्रणयन किया है जिनमें कुछ टीकाकारों का यहाँ संक्षिप्त संकेत किया जा रहा है:

- श्रीधर स्वामी (भावार्थ दीपिका; 13वीं शती, भागवत के सबसे प्रख्यात व्याखाकार),
- सुदर्शन सूरि (14वीं शती शुकपक्षीया व्याख्या विशिष्टाद्वैतमतानुसारिणी है);
- सन्त एकनाथ (एकनाथी भागवत; १६वीं शती मे मराठी भाषा की उत्तम रचना),
- विजय ध्वज (पदरत्नावली 16वीं शती; माध्वमतानुयायी),
- वल्लभाचार्य (सुबोधिनी 16वीं शती, शुद्धाद्वैतवादी),
- शुदेवाचार्य (सिद्धांतप्रदीप, निबार्कमतानुयायी),
- सनातन गोस्वामी (बृहद्वैष्णवतोषिणी),
- जीव गोस्वामी (क्रमसन्दर्भ)[5,7,8]

देशकाल का प्रश्न

भागवत के देशकाल का यथार्थ निर्णय अभी तक नहीं हो पाया है। एकादश स्कंध में (5.38-40) कावेरी, ताम्रपर्णी, कृतमाला आदि द्रविड़देशीय नदियों के जल पीनेवाले व्यक्तियों को भगवान् वासुदेव का अमलाशय भक्त बतलाया गया है। इसे विद्वान् लोग तमिल देश के आलवारों (वैष्णवभक्तों) का स्पष्ट संकेत मानते हैं। भागवत में दक्षिण देश के वैष्णव तीर्थों,

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

नदियों तथा पर्वतों के विशिष्ट संकेत होने से कतिपय विद्वान् तमिलदेश को इसके उदय का स्थान मानते हैं।

काल के विषय में भी पर्याप्त मतभेद है। इतना निश्चित है कि बोपदेव (13वीं शताब्दी का उत्तरार्ध, जिन्होंने भागवत से संबद्ध 'हरिलीलामृत', 'मुक्ताफल' तथा 'परमहंसप्रिया' का प्रणयन किया तथा जिनके आश्रयदाता, देवगिरि के यादव राजा थी), महादेव (सन् 1260-71) तथा राजा रामचंद्र (सन् 1271-1309) के करणाधिपति तथा मंत्री, प्रख्यात धर्मशास्त्री हेमाद्रि ने अपने 'चतुर्वर्ग चिंतामणि' में भागवत के अनेक वचन उधृत किए हैं, भागवत के रचयिता नहीं माने जा सकते। शंकराचार्य के दादा गुरु गौड़पादाचार्य ने अपने 'पंचीकरणव्याख्या' में 'जगृहे पौरुषं रूपम्' (भा. 1.3.1) तथा 'उत्तरगीता टीका' में 'श्रेय: स्रुतिं भक्ति मुदस्य ते विभो' (भा. 10.14.4) भागवत के दो श्लोकों को उद्धृत किया है। इससे भागवत की रचना सप्तम शती से अर्वाचीन नहीं मानी जा सकती।

निम्नलिखित तालिका में कुछ विद्वानों द्वारा सुझाया गया भागवत पुराण का रचनाकाल दिया गया है-

भागवत पुराण का कालनिर्धारण[3]

अनुमातित काल	शोधकर्ता तथा प्रकाशन	प्रकाशन वर्ष
1200-1000 a. C.	एस डी ज्ञानी (Date of the Puranas, NIA 5, पृष्ठ 132)	1943
900 a 800 a. C.	रामनारायण व्यास, en Bhāgavata-purana, पृष्ठ 34-35	1974
200 से 300	वी आर रामचन्द्र दिक्षितार (1896-1953), en The Purana index, पृष्ठ 55: 1.xxix	1951
300 से 400	गणेश वासुदेव तागरे, en Bhāgavata, पृष्ठ 1.xxxiv-xxxvii	1978
400 से 500	B. N. Krishnamurti Sharma, en Bhāgavata-purana, págs. 190-218	1933
400 से 500	डॉ टी एस रुक्मिणी (1932-), en Bhāgavata-purana, pág. 12-14	1970
500 से 550	R. C. Hazra (1905-1982)	1938
500 से 600	बिमानबिहारी मजुमदर (n. 1900 aprox.), en Bhāgavata-purana, pág. 384	1961
500 से 600	N. Ranganatha Sharma (1916-2014), en Bhāgavata-purana	1978
550 से 600	Ray (Bhāgavata-purana, pág. 79)	1935

भागवत पुराण का कालनिर्धारण[3]

अनुमातित काल	शोधकर्ता तथा प्रकाशन	प्रकाशन वर्ष
750	Gail (Bhāgavata-purana, pág. 16)	1969
800 से 850	नीलकण्ठ शास्त्री (1892-1975) (Bhāgavata-purana, pág. 139)[4]	1941
800 से 900	काणे (Bhāgavata-purana, pág. 899)	1962
800 से 900	Pargiter (Bhāgavata-purana, pág. 80)	1922
800 से 900	Walter Elliot (1803-1887), en Bhāgavata-purana, introducción	1921
800 से 1000	Daniel H. H. Ingalls (1916-1999), en Milton Singer (ed.): Krishna: Myths, Rites and Attitudes, prefacio, pág. vi)	1966
850 से 900	T. Hopkins (en Singer, pág. 6)[5]	1966
850 से 1000	राधा कमल मुखर्जी (Lord of the Autumn Moons. Bombay: APH, pág. 65-66)	1957
900	भक्तिविनोद ठाकुर (1838-1914), en el Sri Krisna-samhita (introducción)[6]	1880
900	John Nicol Farquhar (An outline of the religious literature of India, pág. 233)[7]	1920
900	सर्वेपल्ली राधाकृष्णन (1888-1975), en Indian philosophy, pág. 2667	
900	Wendy Doniger O'Flaherty (Bhāgavata-purana)	1974
950	शर्मा (en Morgan, pág. 38)	1953
950	नीलकण्ठ शास्त्री (History of South India, pág. 342).	
900 से 1000	वैद्य (Bhāgavata-purana)	1925
900 से 1000	Moris Winternitz (1863-1937), pág. 556	1925
900 से 1000	Moris Winternitz (1863-1937), pág. 487	1963
1000	सुरेन्द्रनाथ दासगुप्त (1887-1952)	1949
1000	रामकृष्ण गोपाल भांडारकर (1837-1925), पृष्ठ 49	1913
1200 से 1300	Henry Thomas Colebrooke (1765-1837)	

भागवत पुराण का कालनिर्धारण[3]

अनुमातित काल	शोधकर्ता तथा प्रकाशन	प्रकाशन वर्ष
1200 से 1300	Horace Wilson (1786-1860)	
1200 से 1300	Eugène Burnouf (1801-1852)	
1200 से 1300	Christian Lassen (1800-1876)	
1200 से 1300	Arthur Macdonell (1854-1930)	

प्रभाव

भागवत का प्रभाव मध्ययुगीय वैष्णव संप्रदायों के उदय में नितांत क्रियाशील था तथा भारत की प्रांतीय भाषाओं के कृष्ण काव्यों के उत्थान में विशेष महत्वशाली था। भागवत से ही स्फूर्ति तथा प्रेरणा ग्रहण कर ब्रजभाषा के अष्टछापी (सूरदास, नंददास आदि), निम्बार्की (श्रीभट्ट तथा हरिव्यास), राधावल्लभीय (हितहरिवंश तथा हरिदास स्वामी) कवियों ने ब्रजभाषा में राधाकृष्ण की लीलाओं का गायन
किया। मिथिला के विद्यापति, बंगाल के चंडीदास, ज्ञानदास तथा गोविंददास, असम के शंकर देव तथा माधवदेव, उत्कल के उपेन्द्र भंज तथा दीनकृष्णदास, महाराष्ट्र के नामदेव तथा माधव पंडित, गुजरात के नरसी मेहता तथा राजस्थान की मीराबाई - इन सभी संतों तथा कवियों ने भागवत के रसमय वर्णन से प्रेरणा प्राप्त कर राधाकृष्ण की कमनीय केलि का गायन अपने विभिन्न काव्यों में किया है। तमिल, आंध्र, कन्नड तथा मलयालम के वैष्णव कवियों के ऊपर भी भागवत का प्रभाव भी कम नहीं है।

भागवत का आध्यात्मिक दृष्टिकोण अद्वैतवाद का है तथा साधनादृष्टि भक्ति की है। इस प्रकार अद्वैत के साथ भक्ति का सामरस्य भागवत की अपनी विशिष्टता है। इन्हीं कारणों से भागवत वाल्मीकीय रामायण तथा महाभारत के साथ संस्कृत की 'उपजीव्य' काव्यत्रयी के अन्तर्भूत माना जाता है।[9,10,11]

संरचना

भागवत में 18 हजार श्लोक, 335 अध्याय तथा 12 स्कन्ध हैं। इसके विभिन्न स्कंधों में विष्णु के लीलावतारों का वर्णन बड़ी सुकुमार भाषा में किया गया है। परंतु भगवान् कृष्ण की ललित लीलाओं का विशद विवरण प्रस्तुत करनेवाला दशम स्कंध भागवत का हृदय है। अन्य पुराणों में, जैसे विष्णुपुराण (पंचम अंश), ब्रह्मवैवर्त (कृष्णजन्म खंड) आदि में भी कृष्ण का चरित् निबद्ध है, परंतु दशम स्कंध में लीलापुरुषोत्तम का चरित् जितनी मधुर भाषा, कोमल पदविन्यास तथा भक्तिरस से आप्लुत होकर वर्णित है वह अद्वितीय है। रासपंचाध्यायी (10.29-33) अध्यात्म तथा साहित्य उभय दृष्टियों से काव्यजगत् में एक अनूठी वस्तु है। वेणुगीत (10.21), गोपीगीत, (10.30), युगलगीत (10.35), भ्रमरगीत (10.47) ने भागवत को काव्य के उदात्त स्तर पर पहुँचा दिया है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

भागवत के १२ स्कन्द निम्नलिखित हैं-

स्कन्ध संख्या	विवरण
प्रथम स्कन्ध	इसमें भक्तियोग और उससे उत्पन्न एवं उसे स्थिर रखने वाला वैराग्य का वर्णन किया गया है।
द्वितीय स्कन्ध	ब्रह्माण्ड की उत्त्पत्ति एवं उसमें विराट् पुरुष की स्थिति का स्वरूप।
तृतीय स्कन्ध	उद्धव द्वारा भगवान् का बाल चरित्र का वर्णन।
चतुर्थ स्कन्ध	राजर्षि ध्रुव एवं पृथु आदि का चरित्र।
पंचम स्कन्ध	समुद्र, पर्वत, नदी, पाताल, नरक आदि की स्थिति।
षष्ठ स्कन्ध	देवता, मनुष्य, पशु, पक्षी आदि के जन्म की कथा।
सप्तम स्कन्ध	हिरण्यकश्यिपु, हिरण्याक्ष के साथ प्रहलाद का चरित्र।
अष्टम स्कन्ध	गजेन्द्र मोक्ष, मन्वन्तर कथा, वामन अवतार
नवम स्कन्ध	राजवंशों का विवरण। श्रीराम की कथा।
दशम स्कन्ध	भगवान् श्रीकृष्ण की अनन्त लीलाएं।
एकादश स्कन्ध	यदु वंश का संहार।
द्वादश स्कन्ध	विभिन्न युगों तथा प्रलयों और भगवान् के उपांगों आदि का स्वरूप।

विचार-विमर्श

भागवत धर्म वैष्णव धर्म का अत्यंत प्रख्यात तथा लोकप्रिय स्वरूप। 'भागवत धर्म' का तात्पर्य उस धर्म से है जिसके उपास्य स्वयं भगवान् हों। और वासुदेव कृष्ण ही 'भगवान्' शब्द वाच्य हैं (कृष्णस्तु भगवान् स्वयम् : भागवत) अत: भागवत धर्म में कृष्ण ही परमोपास्य तत्व हैं जिनकी आराधना भक्ति के द्वारा सिद्ध होकर भक्तों को भगवान् का सान्निध्य तथा सेवकत्व प्राप्त कराती है। सामान्यत: यह नाम वैष्णव संप्रदायों के लिए व्यवहृत होता है, परंतु यथार्थत: यह उनमें एक विशिष्ट संप्रदाय का बोधक है। भागवतों का महामंत्र है 'ओं नमो भगवते वासुदेवाय' जो द्वादशाक्षर मंत्र की संज्ञा से विभूषित किया जाता है। पांचरात्र तथा वैखानस मत 'नारायण' को ही परम तत्व मानते हैं, परंतु इनसे विपरीत भागवत मत कृष्ण वासुदेव को ही परमाराध्य मानता है। भागवत धर्म को मुख्य रूप से आभीरों का धर्म माना जाता था और कृष्ण स्वयं आभीर के रूप में जाने जाते थे। मध्यकालीन साहित्य में, कृष्ण को आभीर कहा गया है।[1]

इस धर्म की प्राचीनता अनेक पुष्ट प्रमाणों के द्वारा प्रतिष्ठित है। गुप्त सम्राट् अपने को 'परम भागवत' की उपाधि से विभूषित करने में गौरव का अनुभव करते थे। फलत: उनके शिला लेखों में यह उपाधि उनके नामों के साथ अनिवार्य रूप से उल्लिखित है। विक्रमपूर्व प्रथम तथा द्वितीय शताब्दियों में भागवत धर्म की व्यापकता तथा लोकप्रियता शिलालेखों के साक्ष्य पर निर्विवाद सिद्ध होती है। श् ईसवी पूर्व प्रथम शतक में

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

महाक्षत्रप शोडाश (80 ई. पूर्व से 57 ई. पू.) मथुरा मंडल का अधिपति था। उसके समकालीन एक शिलालेख का उल्लेख है कि वसु नामक व्यक्ति ने महास्थान (जन्मस्थान) में भगवान् वासुदेव के एक चतु:शाल मंदिर, तोरण तथा वेदिका (चौकी) की स्थापना की थी। मथुरा में कृष्ण के मंदिर के निर्माण का यह प्रथम उल्लेख है। नानाघाट के गुहाभिलेख (प्रथम शती ई. पू.) में अन्य देवों के साथ संकर्षण तथा वासुदेव का नाम भी लखनऊ संग्रहालय में सुरक्षित संकर्षण (बलराम) की द्विभुजी प्रतिमा (जिसके दाहिने हाथ में मूसल और बाएँ हाथ में हल है) इसी युग की मानी गई है। बेसनगर का प्रख्यात शिलालेख (200 ई. पू.) इस विषय में विशेष महत्व रखता है। इस शिलालेख का कहना है कि हेलियोदोर ने देवाधिदेव वासुदेव की प्रतिष्ठा में इस गरुडस्तंभ का निर्माण किया था। यह दिय का पुत्र, तक्षशिला का निवासी था जो राजा भागभद्र के दरबार में अंतलिकित (भारतीय ग्रीक राजा 'एंटिअल किडस') नामक यवनराज का दूत बनकर रहता था। यूनानी राजदूत अपने को 'भागवत' कहता है। इस शिलालेख का ऐतिहासिक वैशिष्ट्य यह है कि उस युग में वासुदेव देवाधिदेव (अर्थात् देवों के भी देव) माने जाते थे और उनके अनुयायी 'भागवत' नाम से प्रख्यात थे। भागवत धर्म भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश तक फैला हुआ था और यह विदेशी यूनानियों के द्वारा समादृत होता था। पातंजल महाभाष्य से प्राचीनतर महर्षि पाणिनि के सूत्रों की समीक्षा भागवत धर्म की प्राचीनता सिद्ध करने के लिए नि:संदिग्ध प्रमाण है।[12,13,15]

पाणिनि ने 'वासुदेवार्ज्जुनाभ्यां बुन्' (4.3.98) सूत्र में वासुदेव की भक्ति करनेवाले व्यक्ति के अर्थ में न् (अक) प्रत्यय का विधान किया है जिससे वासुदेव भक्त (वासुदेवो भक्तिरस्य) के लिए 'वासुदेवक' शब्द निष्पन्न होता है। इस सूत्र के भाष्य तथा प्रदीप के अनुशीलन से 'वासुदेव' का अर्थ नि:संदिग्ध रूप से परमात्मा ही होता है, वसुदेव नामक क्षत्रिय का पुत्र नहीं :

संज्ञैषा तत्र भगवत: (महाभाष्य)

नित्य: परमात्मदेवताविशेष इह वासदेवो गृह्यते (प्रदीप)

कैयट का कथन है कि यहाँ नित्य परमात्मा देवता ही 'वासुदेव' शब्द से गृहीत किया गया है। काशिका इसी अर्थ की पुष्टि करती है (संज्ञैषा देवताविशेषस्य न क्षत्रियाख्या, 4.3.98 सूत्र पर काशिका) तत्वबोधिनी में इसी परंपरा में 'वासुदेव' का अर्थ परमात्मा किया गया है। पंतजलि के द्वारा 'कंसवध' तथा 'बलिबंधन' नाटकों के अभिनय का उल्लेख स्पष्टत: कृष्ण वासुदेव का ऐक्य 'विष्णु' के साथ सिद्ध कर रहा है : इसे वेबर, कीथ, ग्रियर्सन आदि पाश्चात्य विद्वान् भी मानते हैं। इन प्रमाणों से सिद्ध होता है कि पाणिनि के युग में (ई. पूर्व षष्ठ शती में) भागवत धर्म प्रतिष्ठित हो गया था। इतना ही नहीं, उस युग में देवों की प्रतिमा भी मंदिरों में या अन्यत्र स्थापित की जाती थी। ऐसी परिस्थिति में पाणिनि से लगभग तीन सौ वर्ष पीछे चंद्रगुप्त मौर्य के दरबार का यूनानी राजदूत मेगस्थीनीज जब मथुरा तथा यमुना के साथ संबद्ध 'सौरसेनाई' (शौरसेन) नामक भारतीय जाति में 'हेरिक्लीज़' नामक देवता की पूजा का उल्लेख करता है, हमें आश्चर्य करने का अवसर नहीं होता। 'हेरिक्लीज़' शौर्य का प्रतिमान बनकर संकर्षण का द्योतक हो, चाहे कृष्ण का। उनकी पूजा भागवत धर्म का प्रचार तथा प्रसार का संशयहीन प्रमाण है।

भागवत धर्म अपनी उदारता और सहिष्णुतावृत्ति के कारण अत्यंत प्रख्यात है। इस धर्म में दीक्षित होने का द्वार किसी के लिए कभी बंद नहीं रहा। भगवान् वासुदेव के प्रति प्रेम रखनेवाला प्रत्येक जीव इस धर्म में आ सकता है, चाहे वह जात्या कोई भी हो तथा गुणत: कितना भी नीच हो। भागवत पुराण का यह प्रख्यात कथन भागवत धर्म के औदार्य का स्पष्ट परिचायक है :

किरात हूणध्रां पुलिंद पुल्कसा

आभीरकंका यवना खशादय:।

येऽन्ये पापा यदुपाश्रयाश्रया:

शुध्यंति तस्मै प्रभविष्णवे नम:।। (भा. 2)

श्लोक का तात्पर्य है कि किरात, हूण, आंध्र, पुलिंद, पुल्कस, आभीर, कंक, यवन, खश आदि जंगली तथा विधर्मी जातियों ने और अन्य पापी जनों ने भगवान् के भक्तों का आश्रय लेकर शुद्धि प्राप्त की है, उन प्रभावशाली भगवान् को नमस्कार। यवन हेलियोदोर का भागवत धर्म में दीक्षित होना इस पथ का ऐतिहासिक पोषक प्रमाण है। यह भागवतों की सहिष्णुतावृत्ति का नि:संशय परिचायक तथा उद्बोधक है।[15,17,18]

भागवत मत में अहिंसा का साम्राज्य है। भागवत मत वैदिक यज्ञयागों के अनुष्ठानों का विरोधी नहीं है, परंतु वैदिक यज्ञों में यह हिंसा का प्रबल विरोधी है, नारायणीय पर्व के भगवद्भक्त राजा उपरिचर का आख्यान इसी सिद्धांत को पुष्ट करता है। उस नरपति ने महान् अश्वमेध किया, परंतु उसमें किसी प्रकार के पशु का हिंसन तथा बलिदान नहीं किया गया (संभूता : सर्वसंभारास्तमिन् राजन् महाक्रतौ। न तत्र पशुघातोऽभूत् स राजैवं स्थितोऽभवत्। : शांतिपर्व, अ. 336, श्लो.10)। 'मा हिंस्यात् सर्वा भूतानि' इस श्रुतिवाक्य का अक्षरश: अनुगमन भागवतों ने ही सर्वप्रथम किया तथा इसका पालन अपने आचारानुष्ठानों में किया।

साध्य पक्ष

भागवत मत का सर्वश्रेष्ठ मान्य ग्रंथ है : श्रीमद्भागवत जो अष्टादश पुराणों में अपने विषयविवेचन की प्रौढ़ता तथा काव्यमयी सरसता के कारण सबसे अधिक महत्वशाली है (दे. 'भागवत')। भागवत के सिद्धांत भागवतधर्म के महनीय तथा माननीय सिद्धांत हैं। भागवत का कथन है कि परमार्थत: एक ही अद्वय ज्ञान है। वही ज्ञानियों के द्वारा 'ब्रह्म', योगियों के द्वारा 'परमात्मा' तथा भगवद्भक्तों के द्वारा 'भगवान्' कहा जाता है। भेद है उपासकों की दृष्टि का तथा उपासना के केवल तारतम्य का। एक अभिन्न परम तत्व नाना उपासना की दृष्टि में भिन्न प्रतीत होता है, परंतु वह अभिन्न अद्वयज्ञान रूप :

वदंति तत् तत्वविदस्तत्वं. यज् ज्ञानमद्वयम्

ब्रह्मेति परमात्मेति भगवानिति शब्द्यते।: (भाग. 1.2:11)

शक्तियों की संपत्ति ही भगवान् की भगवत्ता है। यह शक्ति एक न होकर अनेक हैं तथा अचिंतनीय है। अचिंत्यशक्ति का निवास होने के कारण वह 'लीलापुरुषोत्तम' है। इसी के कारण वह एक होते हुए भी अनेक प्रतीत होता है और भासित होने पर भी वह वस्तुत: एक है। इसीलिए वह बहुमूर्तिक होने पर भी एकमूर्तिक है (यजंति त्वन्मयास्त्वाँ वै बहुमूल्येकमूर्तिकम्, भाग. 10.40.7)। विष्णुपुराण के 'एकाने स्वरूपाय' तथा गोपालतापिनी के 'एकोऽपि सन् बहुधा यो विभाति' वाक्य का लक्ष्य इसी अचिंत्य शक्ति की ओर है। इसी शक्ति के कारण भगवान् आश्रयशून्य, शरीररहित तया स्वयं अगुण होते हुए भी अपने स्वरूप के द्वारा ही इस सगुण विश्व की सृष्टि, स्थिति तथा संहार करते हैं, परंतु इन व्यापारों की सत्ता होने पर भी उनमें किसी भी प्रकार का बिकार उत्पन्न नहीं होता। इसलिए भगवान् का विहारयोग दु:खबोध है, समझने में नितांत कठिन है :

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

दु:खबोध एवायं तव विहारयोग:, यद् अशरणो शरीर इदमनवेक्षि तात्मत्समवाय आत्मनैव अविक्रियमाणेन सगुणमगुण: सृजसि पासि हरसि (भाग. 6.9.34)।

इस प्रकार भगवान् का स्वरूप तीन प्रकार का प्रतीत होता है :

- (क) स्वयंरूप
- (ख) तदेकात्मक रूप और
- (ग) आवेशरूप।

इनमें 'स्वयंरूप' ही अनन्यापेक्षी मुख्यरूप है। सच्चिदानंद विग्रह, परम सौंदर्यनिकेतन, परमनयनाभिराम स्वयंरूप ही भगवान् का सर्वश्रेष्ठ रूप है। 'तदेकात्मकरूप' स्वयंरूप के साथ एकता रखने पर भी आकृति, आकार तथा चरितादिकों के द्वारा उससे भिन्न के समान प्रतीत होता है। शक्तियों के उत्कर्ष और ह्रास के कारण इस रूप में दो प्रकार होते हैं : विलास तथा स्वांश। 'विलास' का रूप मूलरूप से आकृति में भिन्न रहता है, परंतु गुणों में वह प्राय: समान ही होता है। विलास में शक्ति का प्राकट्य अधिक होता है, परंतु 'स्वांश' में शक्ति का प्राकट्य तदपेक्षया न्यून होता है। स्वयंरूप के अनंत गुणों की सत्ता होने पर भी 64 गुणों का अस्तित्व और उनमें भी चार गुणों का अस्तित्व सर्वदा तथा सर्वथा माना जाता है। ये गुण हैं :

- (1) लोकों को चमत्कृत करनेवाली लीला,
- (2) प्रेम द्वारा सुशोभित 'प्रियमंडल',
- (3) चराचर को मुग्ध करनेवाली रूपमाधुरी तथा
- (4) जड़चेतन को विस्मित करनेवाला मुरलीनिनाद।

कृष्ण में इन चारों का सद्भाव उनकी भगवत्ता सिद्ध करने का परम उपाय है। 'आवेश' रूप में भगवान् जीवों में न्यूनाधिक रूप से अपनी शक्ति का आधान करते हैं। यह उनका सबसे छोटा रूप माना जाता है।[17,18]

साधनपक्ष

भगवान् की उपलब्धि का एकमात्र साधन है : भक्ति। यह भक्ति मुक्ति से भी बढ़कर है। सामान्य जन आनंदमयी मुक्ति को ही जीवन का लक्ष्य मानते हैं, परंतु भक्तों की दृष्टि में वह नितांत हेय तथा नगण्य वस्तु है। प्रियतम के पाद्मों की सेवा ही उसका एकमात्र लक्ष्य होता है। भगवान् मुक्ति देने के लिए उत्सुक रहते हैं, परंतु एकांती भक्त उसे कथमपि ग्रहण नहीं करता :

न किंचित् साधवी धीरा भक्ता ह्येकांतिनो मय।

वांछंत्यपि मया दत्तं कैवल्यमपुनर्भवम्।। (भाग. 11.20.34)

भगवान् का भी आग्रह मुक्ति की अपेक्षा भक्ति पर ही अधिक है। माँगने पर भक्तों को वह मुक्ति तो देते हैं, परंतु भक्ति नहीं:

..... भगवान् भजतां मुकुंदो

मुक्तिं ददाति कहिंचित् स्म न भक्तियोगम्।। (भाग. 5.6.18)

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

तीव्र ज्ञान के बल पर मुक्ति की उपलब्धि होना एक सामान्य सर्वपरिचित व्यापार है, परंतु भक्ति की प्राप्ति भगवान् की केवल कृपा से ही साध्य होती है। मुक्ति की अपेक्षा भक्ति के आकर्षण का एक गोपनीय रहस्य है। ज्ञान के द्वारा उपलभ्य ब्रह्मानंद की अपेक्षा प्रेमाभक्ति का दर्जा कहीं ऊँचा है, क्योंकि ब्रह्मानंद रस नहीं होता, किंतु भक्ति रसात्मिका है। वासना के विनाश से उत्पन्न आनंद को भक्त तनिक भी नहीं चाहता, वह वासना के विशोधन (सब्लिमेशन) से जायमान अलौकिक रसानंद के लिए लालायित रहता है। इसीलिए मुक्ति बढ़कर भक्ति की कक्षा होती है। परंतु यह भक्ति साधनरूपा बैधी भक्ति नहीं है, अपितु साध्यरूपा रागानुगा प्रेमाभक्ति है जिसके विषय में भागवत प्रवर प्रह्लाद का यह अनुभूत कथन है :

न दानं न तपो नेज्या न शौचं न व्रतानि च।

प्रीयतेऽमलया भक्त्या हरिरन्यद् विडंबनम।।

रागानुगा भक्ति की यह गंभीर मीमांसा भागवत धर्म की विश्व के धर्मो को महनीय देन है।

परिणाम

श्रीमद्भागवद्गीता यथारूप अंतर्राष्ट्रीय कृशनभावनमृत संघ (इस्कॉन, जिसे हरे कृष्ण के नाम से भी जाना जाता है) के संस्थापक अभयचरणारविंद भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद द्वारा श्रीमद्भगवद्गीता का अनुवाद और समीक्षा है। भगवद गीता व्यक्तिगत भगवान कृष्ण के प्रति भक्ति के मार्ग पर जोर देती है। यह पहली बार १९६८ में मैकमिलन पब्लिशर्स द्वारा अंग्रेजी में प्रकाशित हुआ था, और अब लगभग साठ भाषाओं में उपलब्ध है।[1] यह मुख्य रूप से इस्कॉन के अनुयायियों द्वारा प्रचारित और वितरित किया जाता है।[18]

अंतर्वस्तु

प्रत्येक पद के लिए पुस्तक (पूर्ण संस्करण वाली) में देवनागरी लिपि, रोमन लिपि में लिप्यंतरण, शब्द-दर-शब्द संस्कृत-अंग्रेजी अर्थ और अंग्रेजी अनुवाद शामिल हैं। विभिन्न गौड़ीय वैष्णव कार्यों के आधार पर प्रभुपाद द्वारा एक व्यापक टिप्पणी की गई है, जिनमें रामानुज भाष्य (संस्कृत में); विश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर द्वारा सारार्थ-वारसिनी-टीका (संस्कृत); बलदेव विद्याभूषण द्वारा गीता-भूषण-टीका (संस्कृत); और भक्तिविनोद ठाकुर की बंगाली टिप्पणियाँ शामिल हैं।

श्रीमद्भागवद्गीता कथा कुरुक्षेत्र के युद्ध के मैदान में भगवान कृष्ण और बलशाली योद्धा अर्जुन के बीच एक संवाद से संबंधित है। कथा में कृष्ण कौरवों और उनकी सेना के से लड़ने में अर्जुन की सहायता के लिए पृथ्वी पर उतरे हैं। भगवान कृष्ण अर्जुन के रथ चालक की भूमिका निभाते हैं और युद्ध में उनकी सहायता करते हैं, और अर्जुन को भौतिक स्तर में मानव अस्तित्व, भगवान के सर्वोच्च व्यक्तित्व की वास्तविक प्रकृति, और शाश्वत प्रगति और भक्ति योग के अभ्यास के माध्यम से मृत्यु और पुनर्जन्म के सांसारिक चक्रमुक्ति की विधि प्रकट करते हैं। कथा सिखाती है कि कृष्ण की चेतना को प्राप्त करने और आंतरिक बोध प्राप्त करके समझना कि सारा जीवन कृष्ण की शाश्वत ऊर्जा का प्रकटीकरण है, एक व्यक्ति की आत्मा को पुनर्जन्म (मृत्यु और पुनर्जन्म) के चक्र से मुक्त कर देगा।

कथा का समापन कृष्ण के साथ अर्जुन को उनके सार्वभौमिक रूप को प्रकट करने के साथ होता है जिसमें सभी जीवन और भौतिक अस्तित्व शामिल हैं। कथा में एक उल्लेखनीय घटना यह है कि जब अर्जुन विरोधी सेना की ओर देखता है और अपने रिश्तेदारों को विरोधी सेना के लिए लड़ते हुए देखता है, तो वह दुःख

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

और पछतावे से भर जाता है कि उसे अपनों का खून बहाना होगा। जवाब में कृष्ण ने अर्जुन को अपना असली रूप प्रकट किया और उससे कहा कि इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उसके रिश्तेदार आज युद्ध में मर जाते हैं क्योंकि वे अंततः वैसे भी मर जाएंगे, और सर्वोच्च भगवान के लिए अर्जुन का कर्तव्य और उसकी आत्म-साक्षात्कार अपने रिश्तेदारों से लगाव के कारण उसकी सामग्री से परे है। श्रीमद्भागवद्गीता हमें यह सीख देती है कि कुछ भी वास्तव में कभी नहीं मरता है और यह कि सारा जीवन मृत्यु और पुनर्जन्म के निरंतर चक्र में है, और ईश्वर के सर्वोच्च व्यक्तित्व को प्रकट करने के लिए आत्म-साक्षात्कार और प्रगति की प्रक्रिया के लिए एक कर्तव्य है और कृष्ण भावनामृत को प्राप्त करते हैं, जिससे मृत्यु और पुनर्जन्म के शाश्वत चक्र से बच जाते हैं।

ग्रंथ कृष्ण की ओर भक्ति के मार्ग की वकालत करती है, जिन्हें स्वयं भगवान के सर्वोच्च व्यक्तित्व के रूप में देखा जाता है। यह स्थापित किया जाता है कि कृष्ण अवतार नहीं हैं, बल्कि सभी कारणों और अवतारों के स्रोत हैं। यहाँ तक कि वे विष्णु के कारण भी हैं।[2] श्रीमद्भागवद्गीता यथारूप को गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के रूप में लिखा गया है। वेद के अनुयायी भगवद्गीता को वेदों और उपनिषदों के ज्ञान का सार मानते हैं, और पुस्तक को आधिकारिक और सत्य मानते हैं।

गीता के कुछ संस्करण कवि एलन गिन्सबर्ग और धर्मशास्त्री थॉमस मर्टन द्वारा प्रस्तावना के साथ आते हैं। १९७२ के मैकमिलन "पूर्ण संस्करण" में शिकागो विश्वविद्यालय के प्रोफेसर एडवर्ड सी. डिमॉक जूनियर की एक प्रस्तावना भी शामिल है।[12,13]

पदार्थ

श्रीमद्भागवद्गीता यथारूप समकालीन पश्चिमी दुनिया के लिए जीने के एक तरीके का सुझाव देता है, जो मनुस्मृति और दूसरे हिन्दू धर्मशास्त्रों से प्रेरणा लेता है। इस जीने के तरीके में एक आदर्श समाज को चार वर्णों में बाँटने की बात कही गई है (ब्राह्मण - बुद्धिजीवी, क्षत्रिय - प्रशासक, वैश्य - सौदागर, शूद्र - मजदूर)। इस लेख में प्रभूपाद ने इस बात का समर्थन किया है कि कोई व्यक्ति अपनी वंशावली से नहीं, बल्कि अपने गुण से इन चारों में से किसी वर्ण का हिस्सा बंता है। पुस्तक में समझाया गया है कि समाज एक दिलदार क्षत्रिय द्वारा राज किए जाने से ही सबसे बेहतरीन तरीके से चल सकता है, जो ग्रंथों में सिखाई गई परंपरा को मानने वाले किसी आत्मनियंत्रित और नेकदिल ब्राह्मण के मार्गदर्शन से राज करेगा। क्षत्रिय राज किसी लोकतांत्रिक देश के न्यायालय की तरह मृत्युदंड भी दे सकता है।

ब्राह्मणों, बुजुर्गों, महिलाओं, बच्चों और गायों को विशेष सुरक्षा देने के लिए कहा गया है, जिसके साथ जानवरों, विशेष रूप से गायों को हर कीमत पर वध से बचाया जाना है। प्रभुपाद ने पाठकों को शाकाहारी आहार (वनस्पति और दूध के बने आहार) अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया और कृषि को समाज के आदर्श आर्थिक आधार के रूप में दिया। प्रभुपाद ने निष्कर्ष निकाला कि समाज को "कृष्ण के प्रति जागरूक" अर्थात कृष्ण (भगवान) के प्रति भक्ति से प्रबुद्ध होना चाहिए।

संस्करण इतिहास

लेखक अभयचरणारविंद भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद १९६५ में संयुक्त राज्य अमेरिका पहुंचे। १९६६ में उन्होंने न्यू यॉर्क शहर में २६ २रे ऐवन्यू की एक दुकान के सामने अंतर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ की स्थापना की। उस समय, वे श्रीमद्भागवद्गीता यथारूप को प्रकाशित करने के लिए बहुत उत्सुक थे।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

मैकमिलन प्रकाशक १९६८ में ४००-पृष्ठ संस्करण प्रकाशित करने के लिए सहमत हुए, लेकिन मूल पांडुलिपि १,००० पृष्ठों से अधिक थी, इसलिए पहले मैकमिलन संस्करण को "संक्षिप्त संस्करण" के रूप में जाना गया।

१९७२ तक "संक्षिप्त संस्करण" की बिक्री पर्याप्त थी, और मैकमिलन "पूर्ण संस्करण" को प्रकाशित करने के लिए सहमत हुए। १९८३ में भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट ने "संशोधित और बढ़े हुए" संस्करण को प्रकाशित किया जिसमें कम से कम एक हजार महत्वपूर्ण परिवर्तन थे।[3] परिवर्तनों को "मूल पांडुलिपि के करीब" होने के रूप में उचित ठहराया गया था। यह संस्करण श्रील प्रभुपाद के अनुयायियों के बीच बहुत विवादास्पद रहा है।

२००१ में कृष्णा बुक्स इं०, जो भक्तिवेदांत बुक ट्रस्ट द्वारा लाइसेंस के माध्यम से प्राप्त है, ने १९७२ के "पूर्ण संस्करण" का पुनर्मुद्रण किया, इसलिए अब "पूर्ण" और "संशोधित और बढ़े हुए" दोनों संस्करण उपलब्ध हैं। जून २०११ में रूसी रूढ़िवादी गिरिजाघर से जुड़े एक समूह ने तोम्स्क के साइबेरियाई क्षेत्र में कृष्ण के रूसी अनुयायियों और स्थानीय अधिकारियों के बीच कथित "हितों के टकराव" के कारण प्रतिबंध लगाने की मांग की थी। इस मामले को एक संघीय न्यायाधीश ने 28 दिसंबर 2011 को खारिज कर दिया था।[5] रूसी राजदूत अलेक्जेंडर कडाकिन ने प्रतिबंध की मांग करने वाले "पागल" की निंदा की, यह रेखांकित करते हुए कि रूस एक धर्मनिरपेक्ष देश है:[6]

रूस एक पंथनिरपेक्ष और लोकतांत्रिक देश है जहाँ सभी पंथों को एक बराबर सम्मान मिलता है...और यह बात सभी भावनाओं की ग्रंथों पर भी लागू है, चाहे वह बाइबल हो, कुरान हो, तोराह हो, अवेस्ता हो, या फ़िर भगवद गीता ही क्यों ना हो, जो भारत और विश्व के लोगों के लिए ज्ञान का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। मॉस्को में रहने वाले लगभग १५,००० भारतीयों और रूस में इस्कॉन के अनुयायियों ने इस मुद्दे को हल करने के लिए भारत सरकार से हस्तक्षेप करने को कहा।[7] इस कदम का संसद सदस्यों ने प्रदर्शन किया क्योंकि वे चाहते थे कि भारत सरकार इस मामले को रूस के साथ मजबूती से उठाए। तोम्स्क जिला अदालत में अंतिम सुनवाई तब २८ दिसंबर को निर्धारित की गई थी, [15,17]अदालत ने तोम्स्क क्षेत्र में मानवाधिकारों के साथ-साथ मॉस्को और सेंट पीटर्सबर्ग के भारतविद्यों पर रूसी लोकपालों की राय लेने के लिए सहमति व्यक्त की।[8] अभियोजक के कार्यालय ने न्यायाधीश के फैसले के खिलाफ अपील दायर की, लेकिन २१ मार्च २०१२ को अपील अदालत ने अभियोजक की याचिका को खारिज करते हुए निचली अदालत के फैसले को बरकरार रखा।[9]

निष्कर्ष

रास पंचाध्यायी मूलत: भागवत पुराण के दशम स्कंध के उनतीसवें अध्याय से तैंतीसवें अध्याय तक के पाँच अध्यायों का नाम है। यह संस्कृत का कोई स्वतंत्र ग्रंथ नहीं है। किंतु हिंदी में रास पंचाध्यायी नाम से स्वतंत्र ग्रंथ लिखे गए और यह नाम अत्यंत प्रसिद्ध हो गया। भागवत पुराण के इन पाँच अध्यायों को इस पुराण का प्राण माना जाता है क्योंकि इस अध्यायों में श्रीकृष्ण की दिव्य लीला के माध्यम से प्रेम और समर्पण की प्रतिष्ठा की गई है। इस लीला का उपास्य काम विजयी माना जाता है अत: जो कोई भक्त इस लीलाप्रसंग को पढ़ता या दृश्य रूप में देखता है वह कामजय की सिद्धि प्राप्त करता है।

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

रास पंचाध्यायी का सार

"रास पंचाध्यायी" के पाँच अध्यायों का संक्षेप में सार इस प्रकार है - शारदीय पूर्णिमा की रात्रि के समय भगवान श्रीकृष्ण के मन में गोपियों के साथ रसमयी रासक्रीड़ा करने का संकल्प हुआ। उन्होंने अपनी मनोहारी कामबीज वंशी की ध्वनि बजाई। वंशी की मोहक ध्वनि सुनते ही गोपियाँ अपना समस्त क्रियाव्यापार त्याग कर रास प्रदेश में कृष्ण के पास पहुँच गई। श्री कृष्ण ने उन्हें पहले तो समझा-बुझाकर अपने घर वापस जाने को कहा, किंतु गोपियाँ अपने निश्चय पर आरूढ़ रहीं और रासक्रीड़ा के लिए कृष्ण से आग्रह करती रहीं। जब गोपियाँ अपने पर लौटने को उद्यत न हुई तो श्री कृष्ण ने आनंदपुलकित मन से मडंलाकार स्थिति होकर उनके साथ रासलीला प्रारंभ की। इस रासलीला को वैष्णव भक्त दिव्य क्रीड़ा मानते हैं और इसका आध्यात्मिक अर्थ प्रस्तुत करते हैं। श्री कृष्ण चिदानंदघन दिव्यशरीर हैं, गोपियाँ दिव्य जगत् की भगवान की अतंरंग शक्तियाँ हैं। उनकी लीला भावभूमि की है स्थूल शरीर और मन से उसका कोई संबंध नहीं। रास पंचाध्यायी पर टीका लिखनेवाले श्री वल्लभाचार्य, श्री श्रीधर स्वामी, श्री जीय गोस्वामी आदि ने इस आध्यात्मिक तत्त्व की व्याख्या बड़े विस्तार से की है।[11,12,13]

हिन्दी में रास पंचाध्यायी

हिंदी के भक्त कवियों ने सभी "रास पंचाध्याची" के इस भागवत तत्त्व को ग्रहण कर अपनी सरस कृतियों में इस स्थान दिया है। सूरदास ने इस प्रसंग को सूरसागर में समेटा है किंतु स्वतंत्र ग्रंथ नहीं लिखा। स्वतंत्र रूप से रास पंचाध्यायी लिखनेवालों में नंददास, रहीम खानखाना, हरिराम व्यास और नवलसिंह कायस्थ के नाम प्रसिद्ध हैं। नंददास की रास पंचाध्यायी रोला छंद में है। साहित्यिक ब्रजभाषा में बड़ी सरस शैली का कवि ने प्रयोग किया है। हरिराम व्यास रचित रास पंचाध्यायी त्रिपदी छंद में है। इसमें 120 छंद हैं। रासलीला का वर्णन हरिराम व्यास ने अपने ढंग से किया है। भागवत पुराण का आनुपूर्वी अनुकरण इसमें नहीं है। रहीमरचित रास पंचाध्यायी का वर्णन "भक्तमाल" में मिलता है। दो पद भी उसमें संकलित हैं। संपूर्ण पुस्तक अप्राप्य है। नवलसिंह की रास पंचाध्यायी सामान्य कोटि की है। रास पंचाध्यायी का महत्त्व प्रेमलक्षणा भक्ति के संदर्भ में बहुत माना जाता है। इसकी कथा कहने की भी परिपाटी पड़ गई है। संक्षेप में, वैष्णव भक्ति के समर्पण भाव को स्थापित करनेवाला यह प्रधान प्रसंग है जो भागवत पुराण का अंश.

चौबीस अवतार, दशम ग्रन्थ का एक भाग है जिसमें विष्णु के चौबीस अवतारों का वर्णन है। परम्परा से तथा ऐतिहासिक रूप से यह गुरु गोबिन्द सिंह की रचना मानी जाती है। यह रचना दशम ग्रन्थ का लगभग ३० प्रतिशत है जिसमें ५५७१ श्लोक हैं। इसमें कृष्ण अवतार तथा राम अवतार क्रमशः २४९२ श्लोक एवं ८६४ श्लोक हैं। कल्कि अवतार में ५८६ श्लोक हैं। ध्यातव्य है कि श्रीमद्भागवत तथा कुछ अन्य पुराणों में भी विष्णु के चौबीस अवतार बताये गये हैं।[17,18]

सरूप दास ने सन १७७६ में 'महिमा प्रकाश' नामक एक ग्रन्थ लिखा, जिसमें लिखा है कि-

दोहरा॥

बेद बिदिआ प्रकाश को संकलप धरिओ मन दिआल ॥
पंडत पुरान इक्कत्र कर भाखा रची बिसाल ॥

चोपई॥

आगिआ कीनी सतगुर दिआला ॥

बिदिआवान पंडत लेहु भाल ॥
जो जिस बिदाआ गिआता होइ ॥
वही पुरान संग लिआवे सोइ ॥
देस देस को सिख चलाए ॥
पंडत पुरान संगति लिआए ॥
बानारस आद जो बिदिआ ठौरा ॥
पंडत सभ बिदिआ सिरमौरा ॥
सतिगुर के आइ इकत्र सभ भए ॥
बहु आदर सतगुर जी दए ॥
मिरजादाबाध खरच को दइआ ॥
खेद बिभेद काहू नहीं भइआ ॥
गुरमुखी लिखारी निकट बुलाए ॥
ता को सभ बिध दई बणाए ॥
कर भाखा लिखो गुरमुखी भाइ ॥
मुनिमो को देहु कथा सुनाइ ॥

दोहरा ॥

ननूआ बैरागी शिआम कब ब्रहम भाट जो आहा ॥
भई निहचल फकीर गुर बडे गुनग गुन ताहा॥
अवर केतक तिन नाम न जानो ॥
लिखे सगल पुनि करे बिखानो ॥
चार बेद दस अशट पुराना ॥
छै सासत्र सिम्रत आना ॥

चोपई॥

चोबिस अवतार की भाखा कीना॥
चार सो चार चलित्र नवीना॥
भाखा बणाई प्रभ स्रवण कराई॥
भए प्रसन्न सतगुर मन भाई॥
सभ सहंसक्रित भाखा करी ॥
बिदिआ सागर ग्रिंथ पर चड़ी ॥[18]

प्रतिक्रिया दें संदर्भ

1. "गीताप्रेस डाट काम". मूल से 23 जून 2010 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 13 मई 2010.
2. ↑ सम्पूर्ण श्रीमद्भागवत पुराण

| ISSN: 2395-7852 | www.ijarasem.com | Impact Factor: 6.551 |Bimonthly, Peer Reviewed & Referred Journal|

| Volume 10, Issue 4, July 2023 |

3. ↑ Tabla Archived 2013-11-03 at the Wayback Machine que se encuentra en el libro The Purāṇas, de Ludo Rocher.
4. ↑ Kumar Das 2006
5. ↑ Según The Advaitic theism of the Bhāgavata purāṇa Archived 2013-11-03 at the Wayback Machine, escrito por Daniel P. Sheridan.
6. ↑ Bhaktivinoda Thakura: Sri Krisna-samhita, capítulo «Introduction» (1880). Mencionado en «When was Bhagavatam written by Vyasadeva?» Archived 2016-02-15 at the Wayback Machine, artículo en el sitio web Veda Hare Krsna.
7. ↑ John Nicol Farquhar: An outline of the religious literature of India. Oxford (Inglaterra), 1920.
8. स्वामी अखंडानंद सरस्वती : श्रीमद्भगवद्रहस्य, बंबई, 1963
9. बलदेव उपाध्याय : भागवत संप्रदाय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी सं. 2010;
10. डॉ॰ सिद्धेश्वर भट्टाचार्य : फिलॉसफी ऑव श्रीमद्भागवत्, दो खंडों में विश्वभारती से प्रकाशित, 1960 तथा 1962
11. श्रीरूप गोस्वामी : लघुभागवतामृतम्, वेंकटेश्वर प्रेस, मुंबई;
12. जीव गोस्वामी : षट् संदर्भ (विशेषत: भक्ति संदर्भ और प्रीति संदर्भ);
13. डॉ॰ भांडारकर : वैष्णविज्म ऐंउ माइनर सेक्ट्स, पूना, 1918;
14. गोपीनाथ कविराज : भक्तिरहस्य, भारतीय दर्शन और साधना भाग 2;
15. बलदेव उपाध्याय : भगवत संप्रदाय, नागरीप्रचारिणी सभा, काशी सं. 2010;
16. बलदेव उपाध्याय : भारतीय साहित्य में श्रीराधा, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्, पटना सं. 2020
17. J.P. Mittal (2006). History Of Ancient India (a New Version) : From 7300 Bb To 4250 Bc,. Atlantic Publishers & Dist. पपृ॰ 143–. आई॰ऍस॰बी॰ऍन॰ 978-81-269-0615-4.
18. ↑ "नवम स्कंध". श्रीमद्भागवत महापुराण (द्वितीय खंड) (86 वाँ संस्करण). गीता प्रेस. 2015. पृ॰ 77.

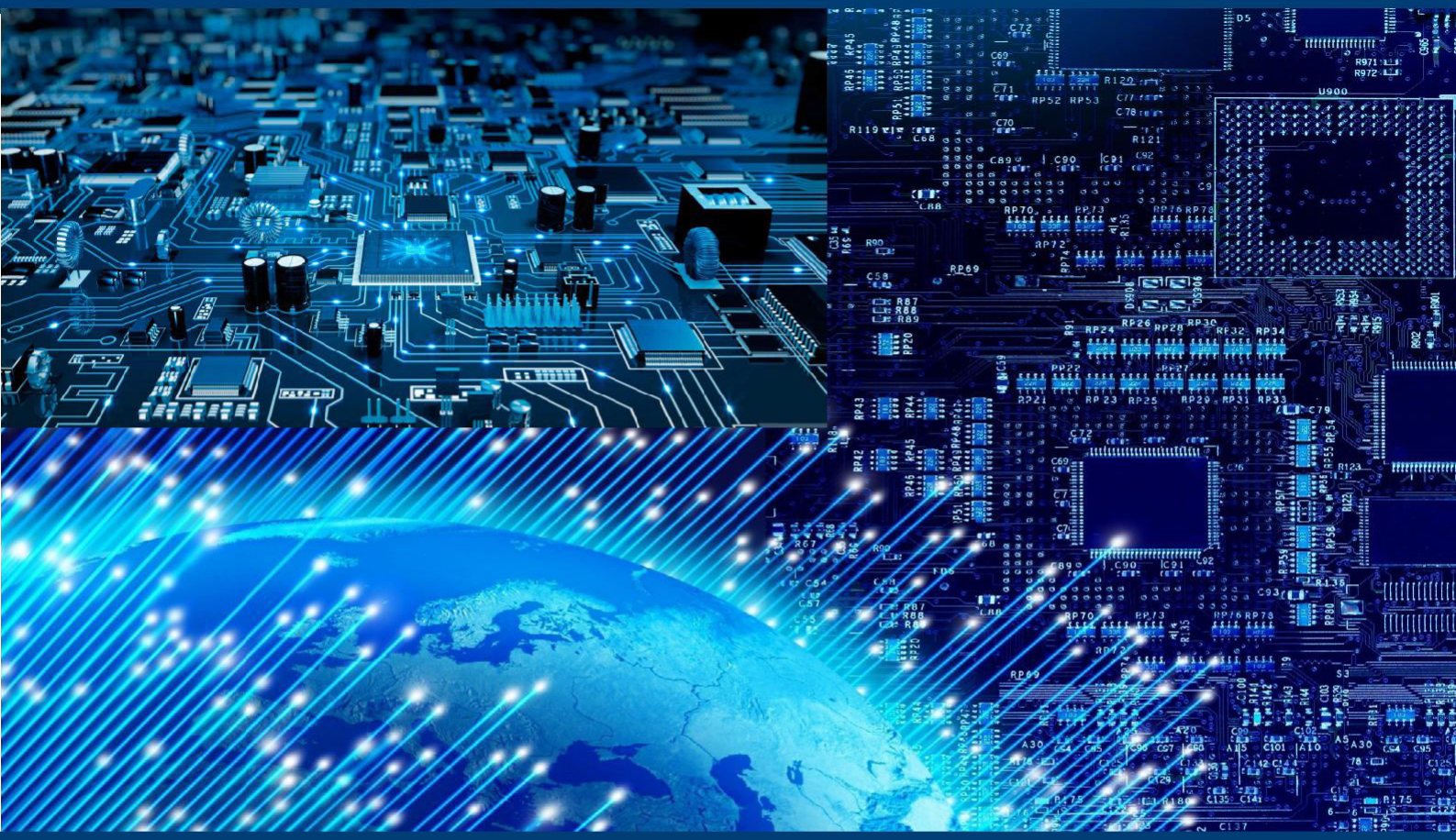

International Journal of Advanced Research in Arts, Science, Engineering & Management (IJARASEM)

| Mobile No: +91-9940572462 | Whatsapp: +91-9940572462 | ijarasem@gmail.com |